अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12, ISSUE 2, (April-June, 2024)

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षा में भगवद्गीता की प्रासंगिकता

रजनी शर्मा[1]
डॉ० रविकान्त सरल**

सार

गीता की प्रमुख विशेषता है, उसकी व्यावहारिकता और प्रासंगिकता वही वस्तु रह सकती है, जो समाज के व्यवहार में प्रचलित हो न कि सिद्धान्तों मात्र की हो। गीता में मात्र तत्व ज्ञान ही नहीं वरन् व्यावहारिक दर्शन सर्वथा दर्शनीय है। गीता दार्शनिक विवेचन ही नहीं है वरन् गीता मानव को केन्द्र में रखकर मानव के सर्वतोन्मुखी कल्याण के उपायों को भी प्रस्तुत करती है। शिक्षा का उद्देश्य केवल पाठ्यक्रम को पढ़ाना हो गया है जबकि भगवद्गीता पाठ्यवस्तु को छात्रों के मानसिक स्तरानुसा उसकी योग्यता, अभिरूचि आदि के अनुसार व्यवहार में उसके प्रयोग करती है।

शब्द कुंजी: परिप्रेक्ष्य, शिक्षा, भगवद्गीता, प्रासंगिकता, दर्शन, नीतिशास्त्र।

प्रस्तावना

गीता एक सार्वभौमिक सत्य के विश्लेषण को उजागर करती है जो हर परिस्थिति, देश एवं काल के लिए आवश्यक समाज, शिक्षा, धर्म व राजनीति के स्वरूप को समीचीन आधार प्रदान करती है। जैसे–जैसे सामाजिक परिवेश तथा उसके मूल्य बदलते जाते हैं वैसे वैसे ही गीता उनको सही संदर्भों में परिभाषित कर नये प्रतिमान स्थापित कर अग्रसारित करने में सक्षम है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुये शोधार्थिनी ने गीता में निरूपित विभिन्न वैचारिक आयामों की भूमिका का वर्तमान शिक्षण व्यवस्था का नयी पीढ़ियों के लिए इस वैश्विक संदर्भ में अध्ययन करने का सुप्रयास किया है।

विश्व के वाङ्मय में शायद ही कोई इतना महत्त्वपूर्ण ग्रंथ हो, जिसने दर्शन, तत्त्वविद्या, नीतिशास्त्र तथा मानवीय आदर्श को अपनी चरम पराकाष्ठा पर पहुँचा दिया हो। भारत जिस गौरवशाली सम्पदा का उत्तराधिकारी रहा है वह कितनी समृद्ध है. यह आज अधिकांश भारतीय भूल चुके हैं। हमारे देश के चिन्तन का अतीत जीवन्त है और जीवन्त अतीत सदैव ही भविष्य के लिए महान प्रेरणा और आलम्बन रहा है। परम्परा आत्मिक जीवन को पंगु कर देने वाला कठोर ढाँचा नहीं, वह अतीत की स्मृति ही नहीं वरन् जीवन्त आत्मा का सतत् आवास है, वह जीवन की जीवना धारा है।

1 शोध छात्रा, शिक्षा विभाग, श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय, गजरौला
** प्रोफेसर, शिक्षा विभाग,

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12, ISSUE 2, (April-June, 2024)

आज भारत एक ऐसे समय व दौर से गुजर रहा है जब नैतिक आक्रमण लोगों को विचित्र जीवन शैलियों के आगे आत्म समर्पण करने को बाध्य कर रहा है। आज भारी कीमत चुकाकर राजनैतिक, सामाजिक और शैक्षिक ढांचों में असंख्य प्रयोग किये जा रहे हैं और हमें राह दिखाने वाला कोई पथ प्रदर्शक प्रकाश स्तम्भ दिखाई नहीं देता। तव मानव आत्मा की शक्ति ही एक मात्र विकल्प रह जाती है। यदि भारतीय उसी के द्वारा शासित होने का संकल्प लें तो भारतीय सभ्यता पुनः अपने सर्वोत्कृष्ट युग में प्रवेश कर सकती है।

आज प्राचीन अनिवार्य संस्कृति टूट रही है, जब नैतिक मानदण्ड नष्ट हो रहें हैं, जब जड़ता या अचेतनता से जगाने के प्रयास हो रहे हैं, जब वातावरण में उत्तेजना व्याप्त है, भीतर उथल–पुथल मची है और संस्कृति पर संकट उपस्थित है, तब आध्यात्मिक आंदोलन का भारी ज्वार जनमत को आप्लावित कर सकता है। दिगन्तु में भारतीय जनमानस को नूतन, अर्पूव और आध्यात्मिक पुनर्जागरण के सूत्रपात का आभास हो चुका है। भारत एक ऐसा देश है जहाँ सांस्कृतिक आदान–प्रदान की पर्याप्त स्वतंत्रता है, जहाँ कोई किसी की उपेक्षा नहीं कर सकता।

अध्ययन की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि

वर्तमान पीढ़ी के शिक्षाविदों के सम्मुख आज जो मुख्य कार्य है वह इन केन्द्राभिमुखी सांस्कृतिक प्रणालियों के विभिन्न दार्शनिक आदर्शों में समन्वय स्थापित करना है जिससे कि वह आपसी संघर्ष के स्थान पर एक दूसरे को सहारा व संबल प्रदान कर सकें। इस प्रक्रिया के द्वारा वह भीतर से रुपांतरित होगी और उन्हें पृथक करने वाले रुप अपना एकांतिक अर्थ खो देंगे और अपने निजी स्रोतों और प्ररणाओं से केवल उस एकता को ही व्यक्त करेंगे।

आज भारत एक संक्रमण काल से गुजर रहा है। आधुनिक परिस्थितियों के अनुरुप नवीन मूल्यों का निर्माण नहीं हो पा रहा है। कारण किसी ऐसे प्रयोजनवादी दर्शन का अभाव है जो शिक्षा को गतिशील बना सके। गीता दर्शन सबको आधार प्रदान करता है। आवश्यकता मात्र इस बात की है कि इसमें निहित शिक्षा के दार्शनिक विचारों का विश्लेषण इस दृष्टिकोण से किया जाए जो कि देश की वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरुप हो सकें। इसमें निहित शैक्षिक विचारों का यह व्यवस्थित रुप इस गीता दर्शन की तुलना में उसके महत्व का सही मूल्यांकन कर सकता है।

भगवद्गीता – एक परिचय

श्रीमद्भागवद् गीता हमारे धर्म ग्रंथों का एक अत्यन्त तेजस्वी और निर्मल हीरा है। पिण्ड–ब्रह्माण्ड ज्ञान सहित आत्मविद्या के गूढ और पवित्र तत्त्वों को थोड़े में एव स्पष्ट रीति से समझा देने वाला, उन्ही तत्त्वों के आधार पर मनुष्य मात्र से पुरुषार्थ की अर्थात् आध्यात्मिक पूर्णावस्था की पहचान करा देने वाला, भक्ति और ज्ञान का मेल करा कर इन दोनों का शास्त्रोक्त व्यवहार के साथ संयोग करा देने वाला और इसके द्वारा संसार में व्यस्त मनुष्य को शांति देकर उसे निष्काम कर्त्तव्य के आचरण में लगाने वाला गीता

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12, ISSUE 2, (April-June, 2024)

के समान बालबोध ग्रंथ, संस्कृत की कौन कहे, समस्त संसार के साहित्य में भी नहीं मिलता। जिस ग्रंथ में समस्त विद्याओं का सार स्वयं भगवान श्रीकृष्ण की वाणी से मुखरित हुआ हो, उसकी योग्यता का वर्णन किसी लेखनी से भला कैसे सम्भव है।

गीता केवल भारत में ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विश्व के लिए कर्त्तव्य शास्त्र का अनूठा ग्रंथ–रत्न है, इसमें जगद्गुरु के रुप में श्रीकृष्ण के द्वारा शिष्य के प्रतीक रुप में अर्जुन को शिक्षा दी गयी है। मानव जीवन की इतनी उच्च कल्पना एवं कर्त्तव्य का इतना उच्च विश्लेषण अन्यत्र प्राप्त नहीं होता। गीता स्थायी दर्शन का सबसे स्पष्ट और विस्तार पूर्ण आंकलन है। इसका स्थायी महत्व केवल भारतवासियों के लिए ही नहीं अपितु मानव मात्र के लिए व सम्पूर्ण मानवता के लिए है। इसमें नीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, ज्ञान–अज्ञान, कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य, पाप–पुण्य, धर्म–अधर्म, स्वधर्म–पराधर्म, सत्य–असत्य, आत्म–ज्ञान, कर्म–ज्ञान तथा अनेक दार्शनिक समस्याओं जैसे प्रकृति–पुरुष, ब्रह्म–ईश्वर, मोक्ष, पुनर्जन्म तथा वर्ण–आश्रम सम्बन्धी सभी का समाधान किया गया है।

वर्तमान परिप्रक्ष्य में शिक्षा में भगवद्गीता की प्रासंगिकता

शिक्षा एक अनवरत् चलने वाली प्रक्रिया है चाहे उसका स्वरूप औपचारिक हो चाहे निरूपचारिक। वर्तमान दशक का आकलन करने से ज्ञात होता है कि आज की शिक्षा लक्ष्य विहीन होती जा रही है।

आत्म शक्ति में कमी, गिरता मनोबल, मूल्य संहिता में गिरावट, सांस्कृतिक क्षरण, मूल्यों का क्षय, बाह्य सांरकृति का झकझोरने वाला आक्रमण जिन सबके कारण भारत के अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया समाज के लिए, जाति के लिए, देश के लिए। देश की सास्कृतिक रक्षा करना अत्यन्त अनिवार्य होता है जिसका सम्पूर्ण दायित्व शिक्षा पर है, वह शिक्षा जो मनुष्य को असत्य से सत्य की ओर ले जाय, अज्ञान से ज्ञान की ओर ले जाए. नितान्त वैज्ञानिकता से सामाजिकता व नैतिकता की ओर ले जाय। अतः शिक्षा का दायित्व चरित्र निर्माण भी है। प्रत्येक देश का अपना एक दर्शन होता है, सांस्कृतिक विश्वास होते है, मूल्यों का समुच्चय होता है जो सभी एक होकर शिक्षा के स्वरूप का निर्माण करते हैं।

अस्तु आज का सच है शिक्षा का वह परिणाम जहाँ विज्ञान का बोलबाला है, तकनीकी का युग है एवं मानवीय विशेषताओं का नितान्त अभाव दृष्टिगोचर होता है।

गीता एक सार्वभौमिक सत्य को प्रश्रय देती है।

वर्तमान शिक्षा दर्शनहीन, उद्देश्यविहीन, बेरोजगारी उत्पन्न करने वाले पाठ्यक्रम से युक्त और अनुशासनहीनता उत्पन्न करने वाली है जबकि गीता की शिक्षा स्वदर्शन युक्त, उद्देश्ययुक्त, पाठ्यक्रम को उपयुक्त दिशा प्रदान करने वाली है।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12, ISSUE 2, (April-June, 2024)

श्रीमद्भगवद्गीता में उस आत्मिक जीवन की एकता पर बल दिया गया है, जिसे दार्शनिक ज्ञान, भक्तिपूर्ण प्रेम या परिश्रमपूर्ण कर्म के रूप में नहीं बाँटा जा सकता। कर्म, ज्ञान और भक्ति एक–दूसरे के पूरक हैं, तब भी जबकि लक्ष्य की खोज कर रहे होते हैं और लक्ष्य को प्राप्त कर लेने के बाद भी। यद्यपि हम एक ही पद्धति पर नहीं चल रहे होते, फिर भी जिस वस्तु की हम खोज कर रहे होते है, वह एक ही है। ज्ञान मानो एक सशरीर व्यक्ति के समान है, जिसका शरीर तो जानकारी है और जिसका लक्ष्य प्रेम है। योग, जिसकी विभिन्न अवस्थाएँ ज्ञान और ध्यान, प्रेम और सेवा है, अन्धकार से प्रकाश की ओर तथा मृत्यु से अमरता की ओर ले जाने वाला प्राचीन मार्ग है।

मनुष्य के जीवन का परम लक्ष्य है– आत्मा का साक्षात्कार करना, परम पद को पाना इत्यादि। इसकी प्राप्ति के लिए साधना करनी पड़ती है। अपने जीवन के सभी कार्यों को इसी लक्ष्य तक पहुँचने के लिए नियन्त्रित करना उचित है।

अतः गीता के सन्दर्भ में यह बात उल्लेखनीय है कि अनुभव ही ज्ञान है, ज्ञान ही मनुष्य की गरिमा है,[प] ''मैं अपने को पृथक करके देख लूँ, जिसमें मैं हूँ'' की इच्छा ही वास्तविक ज्ञान प्राप्त करा सकती है। इसके लिए योग साधना आवश्यक है, जिससे कि आत्मा और ब्रह्म के स्वरूप का अनुभव हो सके। यही अनुभव मोक्ष प्राप्ति का मार्ग है। गीता के अनुसार ज्ञान विचार व चिन्तन से अधिक अनुभव से सम्बन्ध रखता है, जिसे अन्य शब्दों में आत्मिक अनुभूति भी कहा जा सकता है। पाश्चात्य दार्शनिक लॉक कहता है कि मस्तिष्क एक कोरे स्लेट के पत्थर की भाँति हैं, जिस पर अनुभव की कुछ उँगलियाँ लिखा करती है। गीता भी इसी मत का समर्थन करते हुए अनुभव को ही सर्वेसर्वा मानती है।

गीता के अनुसार अनुभव ही ज्ञान है। शास्त्रों को कंठस्थ करने से ज्ञान का भ्रम हो सकता है, वास्तविक ज्ञान नहीं। वास्तविक ज्ञान तो स्वानुभाव द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। यही प्रथम कोटि का ज्ञान है। प्रथम कोटि के ज्ञान के अभाव में द्वितीय कोटि का ज्ञान सारहीन है, अर्थहीन है। अठ्ठारहवें अध्याय के चतुर्थ श्लोक में कहा गया है–

निश्चयं श्रृणु तत्र त्यागे भरतसत्तम
त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः संप्रकीर्तितः। 18/4

हे पुरुषश्रेष्ठ अर्जुन। सन्यास और त्याग, इग दोगों में से पहले त्याग के विषय में तू मेरा निश्चय सुन। क्योंकि त्याग भी सात्विक, राजस और तामस भेद से तीन प्रकार का कहा गया है।[पप] ''तू मेरे निश्चय को सुन'' भी अनुभव को पुष्ट करता है, उनका यह निश्चय स्वजनित अनुभव से उदभूत है।

समाज के निरन्तर बदलते रहने की प्रक्रिया के कारण निश्चय ही तत्कालीन परिस्थितियाँ आज से भिन्न रही होंगी और इस परिप्रेक्ष्य में गीता का सार उस समय के लिए सत्य मानने में कोई असहमति नहीं कर सकता परन्तु गीता कोई परिस्थिति अथवा काल या मानय के परिवर्तन के साथ बदल जायेगी ऐसा भी

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12, ISSUE 2, (April-June, 2024)

असभव प्रतीत होता है क्योंकि गीता अपने में व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास करने में विश्वास रखती है। व्यक्ति का विकास ज्ञानी पुरुषों के द्वारा मुख्यतः दो पक्षों (1) शारीरिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने हेतु अपने शरीर एवं गरितष्क को स्वस्थ बनाये रखने में जो गरिवार, विद्यालय व समाज की सहायता से क्रिया–प्रतिक्रिया के बल पर प्राप्त किया जाता है। (2) जो अपने मन और आत्मा के बल पर स्वयं को जानने की प्रक्रिया की जाती है। पहला पक्ष भले ही मनुष्य बाह्य साधनों से सम्पूर्ण करता हो परन्तु आत्मबल और मन की तरंगों का सात्विकीकरण करने के लिए जो शिक्षा मात्र ज्ञान तक ही नहीं रहती वरन् स्वयं के अनुभव को आधार मानती है और वह केवल तभी प्राप्त की जा सकती है जब व्यक्ति स्वयं को एकाग्र करने की क्षमता प्राप्त कर ले और जैसे ही यह क्षमता विद्यार्थी को प्राप्त होती है तो उसका बाह्य या स्कूली शिक्षा से सीधा तारतम्य स्थापित हो जाता है फिर वह संपूर्ण व्यक्तित्व के विकास की गति और सीमा को जानने और पहुँचने में अपने विवेक की क्षमता का प्रयोग कर लेता है। व्यक्ति का ऐसा विकास किसी एक विशेष समय के लिए नहीं वरन् आद्यन्त तक सभी को स्वीकार हे और इसलिए गीता आज के परिप्रेक्ष्य में भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितनी तब थी क्योंकि मनुष्य का उच्च स्तर पर विकास तभी माना जा सकता है जब उसका आत्मीय निर्देश उसकी मनोदशा को सहर्ष स्वीकार्य हो[पपप] अन्यथा जीवन में द्वन्द्व की स्थिति लगातार बनी रहती है। अतः आज की शिक्षा में भी जब तक हम अन्तः करण का शुद्धिकरण और बाह्य परिस्थितियों की आवश्यकता का जोड़कर देना शुरू नहीं करेंगे तब तक समाज का उत्थान सम्भव नहीं।

अध्ययन की विधि

प्रस्तुत अध्ययन में ऐतिहासिक विधि का प्रयोग किया गया है। भगवद्गीता के दार्शनिक आदि सभी विचारों का विवेचन किया गया है, जिससे शिक्षा सम्बन्धी तथ्यों की पृष्ठभूमि के विषय में जानकारी मिल सके। इस अध्ययन में मुख्य रूप से ऐतिहासिक अनुसन्धान विधि का प्रयोग किया गया है।

एफ०एल० व्हिटनी के अनुसार– ऐतिहासिक अनुसन्धान भूत का विश्लेषण करता है इसका उद्देश्य भूतकालीन घटनाक्रम, तथ्य और अभिवृत्तियों के आधार पर ऐसी सामाजिक समस्याओं का चिन्तन एवं विश्लेषण करना है, जिनका समाधान नहीं मिल सका है। यह मानव विचारों और क्रियाओं के विकास की दिशा की खाज करता है, जिसके द्वारा सामाजिक क्रियाओं के लिए आधार प्राप्त हो सके।

वस्तुतः ऐतिहासिक अनुसन्धान का मूल उद्देश्य भूत के आधार पर वर्तमान को समझाना एवं भविष्य के लिए सतर्क होना है। अधिकांश तथ्यों का कोई न कोई ऐतिहासिक आधार होता है। अतः किसी समस्या, घटना अथवा व्यवहार के समुचित मूल्यांकन के लिए उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से परिचित होना आवश्यक होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका
ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12, ISSUE 2, (April-June, 2024)

अध्ययन की प्रासंगिकता

श्रीमद्भागवद्गीता एक ऐसा लोकप्रिय शास्त्र है, जिसे शताब्दियों से लोग नित्य प्रति श्रद्धा भाव से पढ़ते और सुनते तथा सुनाते आये हैं। चिरातीत काल से लोग गीता को भगवान की वाणी मानते चले आ रहे हैं और इस भावना से वे अपने घर में गीता को रखना एक महान धार्मिक कार्य मानते आये हैं।

प्राचीन काल से गीता को जनमानस में आदर की दृष्टि से देखा जाता रहा है। इसे धार्मिक ग्रन्थ के रूप में मान्यता मिली हुई है। इसमें वर्णित ब्रह्म, आत्मा, माया, मोह, संसार इत्यादि के विचारों को जानने के साथ ही यह भी जानना और भी आवश्यक है कि इस शिक्षा दर्शन का किस प्रकार प्रतिपादन हुआ है। जिससे उसको ज्ञान सभी प्राप्त हो सके और उससे सभी लाभान्वित हो सकें। परन्तु अभी तक किसी ने इस ओर पर्याप्त व्यान नहीं दिया है। क्योंकि हमारी शिक्षा पद्धति का जो लक्ष्य लॉर्ड मैकाले ने 1837 में निर्धारित किया था, वही लक्ष्य आज स्वतंत्रता प्राप्ति के 6 दशकों के बाद भी बना हुआ है। इसके अतिरिक्त आज हम पाश्चात्य संस्कृति की चकाचौंध से प्रभावित होकर भौतिकता की ओर उन्मुख हो रहे हैं। हम आपने पुरातन मूल्यों को भूलते जा रहे हैं और नवीन मूल्यों को भी हम ठीक से ग्रहण नहीं कर पा रहे हैं। सर्वत्र ही स्वार्थपरतकता का बोलबाला होता जा रहा है। नैतिकता, परोपकार, अहिंसा, न्याय का सामाजिक जीवन में स्थान नगण्य सा हो गया है। इस अवांछनीय परिवर्तन में शिक्षा भी कहीं न कहीं अप्रत्यक्ष रूप से अपनी प्रभावी भूमिका निभा रही है। आज शिक्षा को अर्थोपार्जन के रूप में ही देखा जाता है। वही व्यक्ति समाज में आदर का पात्र है, जिसने अधिक मात्रा में धनोपार्जन किया है अथवा दूसरे शब्दों में आर्थिक विकास को ही जीवन का अंतिम लक्ष्य मान लिया गया है, जबकि सामाजिक विकास, नैतिक विकास, आध्यात्मिक विकास, बौद्धिक विकास, शारीरिक विकास भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। इन सभी पक्षों पर समुचित ध्यान न दिये जाने के कारण ही शिक्षा व्यक्तित्व का चतुर्मुखी विकास नहीं कर पा रही है, जो कि गांधी जी के अनुसार शिक्षा का एक आवश्यक कार्य होना चाहिए।

भगवद्गीता की व्यावहारिकता

सामाजिक मूल्यों की प्राप्ति के लिये उत्तरदायी व्यवहार ही व्यवहारिकता है। मानव जीवन के अनेक पक्ष है और सभी के समन्वय और एकाग्रता से ही सही ढंग से जीवन–यापन किया जा सकता है। आज मनुष्य बहुत व्यवहारिक हो गया है। जब हम किसी के व्यवहारिक होने की बात करते है तथ हमारा अभिप्राय प्रायः उसकी 'सफलता पर निर्भर' होता है अर्थात् जो 'सफल' है वही 'व्यवहारिक' है। यद्यपि समाज अपने प्रत्येक सदस्य को सफल होने, सफलता प्राप्त करने के अनेकानेक सूत्र देता है परन्तु यह व्यक्तिविशेष पर निर्भर है कि वह कौन से सूत्र अपनाता है और कौन से त्याग देता है। समय परिवर्तनशील है। इसलिए समय के साथ–साथ समाज के सिद्धान्त और प्राथमिकतायें परिवर्तित होती रहती हैं। इसी के फलस्वरूप समाज का व्यवहार और व्यवहारिकताएँ परिवर्तित होती रहती हैं।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12, ISSUE 2, (April-June, 2024)

गीता जैसा ग्रंथ अपनी शाश्वतता को अपनी व्यवहारिकता के कारण ही आज तक अक्षुण्ण बनाये हुये है। यह गीता की व्यवहारिकता का ही परिणाम है जो हमें जीवन के हर क्षेत्र में जीवन्त व व्यवहारिक बने रहने का मार्ग प्रशस्त करती है। गीता की व्यवहारिकता से शैक्षिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक कौन सा क्षेत्र अछूता है।[पअ]

''जहां हार्दिक सम्बन्ध होता है वहाँ तर्क की गुजाइश नहीं होती। तर्क को काटकर श्रद्धा और प्रगोग, इन पखों से ही हम गीता गगन में यथाशक्ति उड़ान भरते हैं।'' गीता पुराने शास्त्रीय शब्दों को नये रूप में लिखने की आदी है। पुराने शब्दों पर नये अर्थों की कलम लगाना विचारक्रांति की अहिंसक प्रक्रिया है। गीता के शब्दों को विस्तृत आयाम प्राप्त है और इसी से वह सभी युगों में सभी क्षेत्रों यथा सामाजिक, मानसिक और नैतिकता आदि के क्षेत्रों में हरदम तरोताजा रहती है। जिससे अनेकानेक विचारक अपनी–अपनी आवश्यकतानुसार और अनुभव के अनुसार ये सभी अर्थ सही सिद्ध कर सके हैं।

गीता में वर्णित सिद्धांत तो उपनिषदों और स्मृतियों में पहले से ही उपस्थित हैं। गीता ने उन्हीं को फिर से उपस्थित किया है, तो इसमें गीता की अपूर्वता नहीं। उसकी अपूर्वता तो यह बताने में यह है कि सिद्धान्तों को आचरण में कैसे लाएँ? इस महाप्रश्न को सभी सन्दर्भों में हल करने में ही गीता की कुशल सार्थकता है।

भविष्योन्मुखी शिक्षा केवल विज्ञान और तकनीकी प्रधान शिक्षा नहीं है, यद्यपि विज्ञान और तकनीकी इसके अनिवार्य अंग है। यह एक व्यापक अवधारणा है जिसके द्वारा हम नयी पीढ़ी के भविष्य की ऐसी कल्पना जगाना चाहते हैं कि ये समाज के विकास और सुदृढ़ीकरण को सही दिशा प्रदान कर सके। प्रयास यह है कि उचित संसाधनों द्वारा इस प्रणाली को विशिष्ट दिशाओं की ओर उन्मुख किया जाए और जहाँ निष्क्रियता आ गई है उसे दूर किया जाए। इन विचारों का मुख्य जोर असमानताओं को मिटाने, प्रतिभा को बंधन मुक्त करने और सामाजिक स्तर पर आत्मसंतोष उत्पन्न करने पर हैं इसलिए इस सम्बन्ध में नई पहल की आवश्यकता है क्योकि विकास को हमने केवल आर्थिक विकास मानकर प्रायः सांस्कृतिक, सामाजिक, मानसिक और नैतिक विकास को अनदेखा कर दिया है। यदि अब भी हम इसी राह पर चलते रहे तो हमें अपनी संस्कृति और भारतीयता खो देने का पूरा भय है और हम इसे किसी भी कीमत पर नहीं चाहेंगे।

यद्यपि संसार में बाह्य भौतिक स्वरूप से संचार–सांधनों, वैज्ञानिक आविष्कारों आदि की उन्नति से बहुत परिवर्तन हुआ है तथापि सुधा और अनुराग की पुरातन शक्तियों और हृदयगत विद्वेष, उल्लास एवं भय इत्यादि मानव प्रकृति के सनातन गुण है। मानव जाति के वास्तविक हितों और धर्म के प्रति गम्भीर आवेगों और दार्शनिक ज्ञान की मुख्य मुख्य समस्याओं आदि ने वैसी उन्नति नहीं की जैसी भौतिक पदार्थों ने की है। मानव मस्तिष्क के इतिहास में भारतीय चिन्तन की विचारधारा अपना एक अत्यन्त शक्तिशाली, भावपूर्ण और गौरवपूर्ण स्थान रखती है।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12, ISSUE 2, (April-June, 2024)

महान विचारकों के भाव कभी पुराने या अव्यवहार्थ नहीं होते प्रत्युत वह उस उन्नति को जो उन्हें मिटती–सी प्रतीत होती है, सजीव प्रेरणा दे देते हैं।

शिक्षा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्रभावित करती है। अत ऐसा होना चाहिए कि भविष्य के लिए सांस्कृतिक, सामाजिक मानसिक और नैतिक विकास की आकांक्षाओं को ध्यानागत रखते हुए अतीत का उत्कृष्ट प्रयोग करते हुए वर्तमान को सर्वोत्कृष्ट बनाया जा सके।

कभी–कभी अत्यन्त प्राचीन भावनामयी कल्पनाएँ हमें अद्भुत आधुनिक रूप के कारण अचम्भे में डाल देती हैं क्योंकि 'अन्तर्दृष्टि' आधुनिकता से ऊपर होती है, उसके ऊपर निर्भर नही करती।

अध्ययन के उद्दश्य

1. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षा में भगवद्गीता की प्रासंगिकता ज्ञात करना।
2. भगवद्गीता के अनुसार वर्तमान में शिक्षण व्यवस्था को स्थापित करने का अध्ययन करना।
3. शिक्षा में भगवद्गीता की व्यावहारिकता का अध्ययन करना।

उद्दश्यों का विवरण

1. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षा में भगवद्गीता की प्रासंगिकता ज्ञात करना।

शोध अध्ययन का प्रथम उद्देश्य **'वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षा में भगवद्गीता की प्रासंगिकता ज्ञात करना।'** गीता की प्रमुख विशेषता है। व्यवहारिक और प्रासंगिक वही चीज रह सकती है जो व्यवहार में प्रचलित हो, न कि सिद्धांतो मात्र की हो। गीता में तत्त्व ज्ञान ही नहीं वरन् व्यवहारिक दर्शन भी सर्वथा दर्शनीय है।

2. भगवद्गीता के अनुसार वर्तमान में शिक्षण व्यवस्था को स्थापित करने का अध्ययन करना।

गीता की शिक्षा व शिक्षण का मुख्य लक्ष्य ऐहिक अभ्युदय (भौतिक उन्नति) के साथ–साथ आध्यात्मिक कल्याण करना है। इस दृष्टि से गीता की शिक्षण विधियों की महती उपादेयता है। वर्तमान शिक्षा के शिक्षण उद्देश्य नितांत एकांगी है जोकि एकमेव भौतिक उन्नति पर बल देते हैं तथा सच्चे विकास, अधिक प्रासंगिक उद्देश्य, की सर्वथा उपेक्षा कर देते हैं। गीता की शिक्षा का आध्यात्मिक कल्याण का उद्देश्य इस अभाव की पूर्ति चितन व मनन विधियों द्वारा कर देता है। अतः शैक्षिक उद्देश्यों व मानव मूल्यों की प्राप्ति की दृष्टि से उनकी शिक्षण विधियाँ श्रेष्ठ है।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12, ISSUE 2, (April-June, 2024)

3. शिक्षा में भगवद्गीता की व्यावहारिकता का अध्ययन करना।

आर्थिक उपादान मानव जीवन का अत्यावश्यक तत्व है। चौसठ कलाओं में पूर्ण योगीराज श्रीकृष्ण सदैव सत्य के साथ व्यवहारिकता को पूर्ण स्थान देते हैं। जीतन के सभी मूल्यों की साधना समान रूप में होनी चाहिए एक को खोकर दूसरे की कीमत पर नहीं। शारीरिक कल्याण, मानवीय कल्याण का अत्यावश्यक अंग है। आनंद अच्छे जीवन का अत्यावश्यक अंग है, आनंद इन्द्रियग्राह्य भी है और आत्मिक भी, यदि ऐसा न होता तो चौसठ कलाओं में ललित कलाओं का महत्त्वपूर्ण स्थान न होता। गीता प्रतिपादित सम्यक् आनंदानुभूति तथा चरम आध्यात्मिक विकास से युक्त जीवन जितना प्राचीन काल में काल में वांछनीय था उतना ही आज भी होना चाहिए। आधुनिक शिक्षा तथा विश्व समुदाय को इन्हें प्राणपण से स्वीकार कर लेना चाहिए।

इस अध्ययन से ऐसी अवधारणाएँ बनेंगी, जैसे दर्शन क्षेत्र में बालक के समुचित विकास में उसकी प्रकृति को महत्त्व देकर रूसो ने प्रस्तुत की थी। आज सभी शिक्षा दार्शनिक इस तथ्य को स्वीकार करने में जरा भी हिचकिचाहट का अनुभव नही करते हैं कि बालक के विकास में उसकी मूल प्रकृति का भी विशेष महत्त्व है।

सभी शिक्षा आयोग यह स्वीकार करते हैं, यदि शिक्षा को भारत राष्ट्र के नवनिर्माण का एक प्रभावी साधन बनाना है, तो शिक्षा को भारत की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाना होगा। इस हेतु सर्वश्रेष्ठ उपाय है, कि ऋग्वेद से लेकर आज तक उपलब्ध अपने समस्त सांस्कृतिक साहित्यिक स्रोतों का अध्ययन करें और उनमें से शिक्षा व शिक्षण–प्रशिक्षण से सम्बन्धित तत्वों एवं सिद्धांतों का चयन करें। अतः इस अध्ययन का उद्देश्य उन सम्भावनाओं का पत्ता लगाना है, जिससे शिक्षा की संरचना इस रूप में प्रस्तुत की जा सके, जिससे भारत का नागरिक राष्ट्र मानव के साथ–साथ विश्व मानव के रूप में भी विकसित हो सके।

निष्कर्ष

भगवद्गीता की प्रमुख विशेषता है उसकी व्यवहारिकता, और प्रासंगिक वही चीज रह सकती है जो समाज के व्यवहार में प्रचलित हो, न कि सिद्धान्तों गात्र की हो। अत्यधिक सिद्धान्त हमें अपने वजन के नीचे दबाकर पग उठाने नहीं देते और हम अपने ही बनाये सिद्धातों के तले दबने को विवश हो जाते हैं। गीता में मात्र तत्व ज्ञान ही नहीं वरन् व्यवहारिक दर्शन सर्वथा दर्शनीय है। गीता मात्र दार्शनिक विवेचन ही नहीं है वरन् गीता मानव को केन्द्र में रखकर मानव के सर्वतोन्मुखी कल्याण के उपायों को भी प्रस्तुत करती है।

भगवद्गीता के अनुसार शिक्षा समाप्ति के अवसर पर घर लौटते समय गुरू अपने शिष्य को उन चुनौतियों का सामना करने के लिए सतर्क करता है जो भावी जीवन में उसके सामने आने वाली हैं। भगवद्गीता को व्यवहार रूप में जीवन में उतार लेना शिक्षा में समाहृत हो पाएगा।

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12, ISSUE 2, (April-June, 2024)

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

प. पर भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानां ज्ञान मुत्तमम्।

पप. मज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धि मिता गता। 14/1।।

नियतस्यु तु संन्यासः कर्मणो नोपद्यते।

मोहात्तस्य परित्यागस्तामस परिकीर्तित।। 18/7।।

दुःखमित्येव यत्कर्म कायक्लेशभयात्यजेत्।

स कृत्वा राजस त्याग नेव त्यागफल लभेतः।।18/8।।

कार्यमित्येव यत्क्तकर्म नियतं क्रियतेऽर्जुन।

सग त्यक्तवा फलं चैव स त्यागः सात्त्विको मतः।18/9।।

पपप. ब्रह्मभूत प्रसन्नात्मा न शोचति न कोड्क्षति।

सम सर्वेषु भूतेषु मदभक्ति लभते पराम्।। 18/54।।

पअ. यदहंकारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे।

मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्वा नियोक्ष्यति।।18/59।।

5. डॉ० गिरीश पचौरी, शिक्षा दर्शन, मेरठ, आर लाल बुक डिपो
6. डॉ० लक्ष्मी लाल के०, ओत शिक्षा दर्शन की पृष्ठभूमि, जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी
7. डॉ० राम शकल पाण्डेय, शिक्षा के दार्शनिक सिद्धान्त, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन
8. डॉ० आर०के० सरल, भाषा शिक्षण, लॉयल बुक डिपो, मेरठ
9. पारस नाथ राय, अनुसंधान परिचय, आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल पब्लिकेशन–3, 2002
10. सुनीता सिंह, श्रीमद्भगवद्गीता के शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक निहितार्थ पीएच०डी०, शिक्षाशास्त्र, डॉ० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद।